VOL- VIII ISSUE- V MAY 2021 PEER REVIEW e-JOURNAL IMPACT FACTOR 7.149 ISSN 2349-638x

लोकजीवन के कुशल चितेरे कवि : जायसी

डॉ. धनंजय कुमार दुबे
dubeydhananjay05@gmail.com

भक्तिकाव्य को लोकजीवन के चिंतन, संघर्षों और आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति कहा जाय तो गलत न होगा. भक्तिकालीन कवि जनसामान्य के बीच रहते हुए अपने अनुभव की पूंजी निर्मित करते हैं. ऐसे में लोक मानस की अनुभूतियों को ग्रहण करने के लिए उन्हें किसी प्रयास की आवश्यकता नहीं बल्कि वे स्वत: भक्त कवियों की अपनी अनुभूतियाँ बन जाती हैं. जनसामान्य के जीवन को प्रभावित करने वाले तमाम कारकों और स्थितियों के वे साक्षी हैं. इस तरह भक्त कवियों की प्रतिभा, वैयक्तिक योग्यता अधिकांश में लोक बुद्धि से अर्जित-निर्मित सृजन प्रतिभा अधिक है.1 इन अनुभवों को पूरी ईमानदारी और सामर्थ्य के साथ व्यक्त करने के कारण, भक्ति का आवरण होने के बावजूद भक्तिकालीन कविता लोकजीवन का यथार्थ चित्र उपस्थित कर पाती है. लोक सामान्य के जीवनानुभवों और चिंताओं को केन्द्रित करता भक्ति काव्य संवेदना से लेकर भाषा, शिल्प के उपकरणों में भी लोक से गहरे जुड़ा दिखता है. यही वजह है कि भक्ति आंदोलन धार्मिक होते हुए भी लोकोन्मुख आंदोलन बन गया,2 जिसका गहरा सामाजिक, सांस्कृतिक असर भारतीय जनमानस पर पड़ा. भक्तिकालीन संत एवं भक्त कवियों की तरह सूफी कवियों ने भी लोकजीवन से जुड़े प्रामाणिक चित्र अपने काव्य में उकेरे हैं. इस दृष्टि से जायसी और उनका काव्य पद्मावत हिन्दी साहित्य की महत्तम उपलब्धि है.

जायसी ने पद्मावत की रचना भले ही सोलहवीं सदी में की परंतु बीसवीं सदी में उन्हें चर्चा के केंद्र में लाने का श्रेय आचार्य रामचन्द्र शुक्ल को है.3 शुक्ल जी ने न सिर्फ जायसी को पुन: चर्चा के केंद्र में रखा अपितु उनके पद्मावत का विशद विवेचन भी किया. शुक्ल जी की भक्तिकालीन आलोचना को प्रखर चुनौती देने का प्रयास करने वाले आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने भी शुक्ल जी की जायसी के काव्य की विवेचना दृष्टि की मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हुए लिखा- "पद्मावत की प्रस्तावना में आपने जैसी काव्य-मर्मज्ञता दिखाई है वैसी हिन्दी तो क्या, अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं में कम ही मिलेगी. यह प्रस्तावना अपने आपमें अत्यधिक महत्वपूर्ण साहित्यिक कृति है."4 जायसी के महत्व को रेखांकित करते हुए शुक्ल जी ने लिखा कि "कबीर ने केवल भिन्न प्रतीत होती हुई परोक्ष सत्ता की एकता का आभास दिया था. प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृश्य सबके सामने रखने की आवश्यकता बनी हुई थी. वह जायसी द्वारा पूरी हुई.5 शुक्ल जी का स्पष्ट मानना था कि हिन्दू और इस्लाम, दोनों धर्मों के लोगों को जोड़ने का जो काम भक्तिकाल के प्रमुख संत एवं भक्त कवियों ने किया था, उसका समाज पर गहरा असर पड़ा था. दोनों धर्मों के लोगों के बीच कड़वाहट कम हुई थी और वे आपस में जुडने लगे थे और अपने जीवन, समाज, और मिथकों की कहानियों

को साझा करने को तत्पर होने लगे थे. ऐसे समय में जायसी ने अपनी रचना पद्मावत के माध्यम से उनको करीब लाने, उन्हें जोड़ने का प्रयास किया.6 इसके लिए जायसी ने एक ऐसी रचना, एक ऐसी जीवन दृष्टि पेश की, जिसमें किसी भी प्रकार के धार्मिक, सामाजिक भेदभाव के लिए कोई स्थान न था. उन्होने धर्म और सिद्धान्त से परे आचरण और व्यवहार को ज्यादा महत्व दिया. जायसी ने अपने धर्म इस्लाम में पूरी आस्था रखते हुए पूरी निष्ठा के साथ हिन्दू धर्म और उसकी जीवन पद्धति के प्रति अपना सम्मान रखा उसे पूरा आदर दिया. उनकी पूरी रचना में धर्म किसी बंधन या अवरोधक की तरह नहीं आता, ना ही किसी विशेष उपलब्धि की तरह.

जायसी ने पद्मावत में अन्य सूफी कवियों की तरह भारतीय जनमानस में प्रचलित और उन्हें प्रभावित करने वाली कथा को अपने काव्य का उपजीव्य बनाया. ऐसा करते हुए उन्होने भारतीय जनमानस में प्रचलित अन्य लोकप्रिय कथाओं को सहायक कथा के रुप में पद्मावत में उपयोग भी किया. इन कथाओं में हिन्दुस्तानी समाज में व्याप्त विभिन्न लोकाचारों, मान्यताओं, रीतिरिवाजों, परम्पराओं, धार्मिक विश्वासों, साधनाओं, देवी-देवताओं, तीर्थस्थानों तथा जीवन पद्धतियों में देखा जा सकता है. जायसी भारतीय लोकमानस में व्याप्त लोक कथाओं से न सिर्फ परिचित थे अपितु इनके सामाजिक, सांस्कृतिक महत्व को भी बखूबी जानते थे. यही वजह है कि ऐसी कथाओं से जुड़े संदर्भ और उद्धरण बड़ी संख्या में उनकी रचना में आद्यंत भरे पड़े हैं. जायसी बड़ी सहजता से हिन्दुस्तानी जनमानस में प्रवेश करते हैं और उससे गहरे जुड़ जाते हैं. यही वजह है कि पद्मावत में व्यक्त जनजीवन और लोक विश्वास एवं मान्यताएँ वृहत्तर रूप में हिंदुस्तानी और हिन्दू समाज के अनुभवों और मान्यताओं का हिस्सा होने के बावजूद पद्मावत में आकर किसी खास धर्म, समुदाय या पंथ की बजाय जनसामान्य के अनुभवों का हिस्सा बन जाती हैं. ऐसा लगता ही नहीं कि यह एक मुस्लिम कवि के अनुभवों और ज्ञान का हिस्सा बनकर सामने आ रहा है. जायसी द्वारा बड़े पैमाने पर काव्य में भारतीय जनमानस में व्याप्त लोक अनुभवों का उपयोग आकर्षित ही नहीं चकित भी करता है. इस लिहाज से जायसी का पद्मावत भक्तिकाल के किसी भी कवि के मुक़ाबले अधिक अनुभव सम्पन्न, अधिक समृद्ध नजर आता है.

जायसी के लोक जुड़ाव का सबसे बड़ा प्रतिमान पद्मावत में व्यक्त रामकथा है. यह स्थापित मान्यता है कि भारतीय हिन्दी समाज के लोक मानस के निर्माण, उसकी संस्कृति और परम्पराओं से रामकथा का अभिन्न संबंध रहा है. यह कथा लोक विश्वास की अमूल्य धरोहर है, जिससे जुड़कर जायसी एक ओर भारतीय लोकमानस से करीबी कायम करते हैं, दूसरी ओर इस कथा के महत्वपूर्ण संदर्भों का व्यावहारिक उपयोग अपनी रचना में कर पाते हैं. जायसी ने पद्मावत की रचना 1540 ईस्वी में की.[7] इसके लगभग सौ वर्षों के बाद तुलसीदास द्वारा रामचरितमानस की रचना की गयी. ऐसा बहुधा कहा जाता है कि राम कथा को जनसमान्य तक पहुंचाने का श्रेय तुलसी और मानस को है. लेकिन मानस से एक सदी पहले जायसी ने पद्मावत में रामकथा से जुड़े प्रसंगों, पात्रों, घटनाओं और भावों की चर्चा की है. यह चर्चा एक-दो बार या दस-बीस बार न होकर लगभग सत्तर बार हुई है. इन चर्चाओं में रामकथा से जुड़े प्रमुख पात्रों, स्थानों और घटनाओं के संकेत मिल जाते हैं. यही नहीं इस पूरी चर्चा को अगर एक साथ रखकर पढ़ा जाय तो पूरी रामकथा का स्वरूप सामने आ जाता है. यहाँ पुन:

ध्यान देने वाली बात यह है कि तुलसीदास कृत रामचरितमानस अबतक अस्तित्व में नहीं आयी थी. इससे यह पता चलता है कि जायसी भारतीय जनमानस से कितने गहरे जुड़े थे. लोक मानस में रामकथा के प्रचलित मौखिक कथा को जायसी ने गहरे आत्मसात किया और तभी उसका संकेत वे इतनी व्यवस्थित तरीके से पद्मावत में कर पाते हैं. राम और कौशल्या में अद्भुत प्रेम से लेकर दशरथ को श्रवण कुमार के माता-पिता से मिले श्राप, राम को वनवास, सीता की राम के साथ वनगमन की जिद, वन में रावण द्वारा भिक्षा मांगना, सीता का भिक्षा देना, रावण के द्वारा सीता का हरण, अशोक वाटिका में सीता की दारुण दशा, राम का सीता के प्रति अनन्य प्रेम, उनके वियोग में दर-दर भटकना, अंगद, हनुमान और अन्य लोगों की सहायता से समुद्र पर पुल बांधना, अंगद का रावण की सभा में पैर जमाकर चुनौती पेश करना, हनुमान द्वारा लंका दहन, लंका की समृद्धि और अजेयता, लंका दहन के प्रभाव और विनाश, रावण और विभीषण में मतभेद और फूट, रावण की समृद्धि, उसकी वीरता और उसका घमंड, लंका में भीषण संग्राम, लक्ष्मण को शक्ति बाण लगना और हनुमान द्वारा त्वरित संजीवनी बूटी लाकर उनका जीवन बचाना, राम-रावण के मध्य भयंकर युद्ध, रावण का सपरिवार सर्वनाश एवं विभीषण को लंका का राज्य मिलने तक के संदर्भों को पद्मावत में देखा एवं पढ़ा जा सकता है. यह पूरी कथा पद्मावत की मूल कथा के सहायक के रूप में अलग अलग स्थानों पर बिखरी पड़ी है, जो पद्मावत की कथा के प्रभाव को बढ़ाने में सहायक है. उसके कुछ उदाहरण हैं-

120/4 है राजहिं लष्षन कै करा । सकत बान मोहा है परा ॥
नहिं सो राम हनिवंत बड़ि दूरी । को लै आव सजीवनि मूरी ॥

376/2 भाइन्ह माहँ होई जनि फूटी । घर के भेद लंक असि टूटी ॥

384/5 तजा राज रावन का केऊ । छाड़ी लंक भभीखन लेउ ॥

387/6 दान करन दै दुइ जग तरा । रावन संचि अगिनि महँ जरा ॥

405/6 सीता हरन राम संग्रामा । हनिवंत मिला मिली तब रामा ॥

413/4 तहूँ एक बाउर मैं भेंटा । जैस राम दसरथ कर बेटा ॥
ओहू मेहरी कर परा बिछोरा । एहि समुंद महँ फिरि फिरि रोवा ॥
पुनि जो राम खोइ भा मरा । तब एक अंत भएउ मिलि तरा ॥

414/1 पदुमावतिहि सोग तस बीता । जस असोग बीरौ तर सीता ॥

426/2 विहंसि आइ माता कहँ मिला । जनु रामहि भेंटै कौसिला ॥

459/7 रावन लंक जारि सब तापा । रहा न जीवन औ तरुनापा ॥

491/5 हनिवंत सरिस भारु मैं कांधा । राघौ सरिस समुंद हठ बांधा ॥

525/8 लंका रावट जसि भई डाह परा गढ़ सोइ । रावन लिखा जो जरै कहँ किमि अजरावर होई ॥

530/2 सेतबंध जस राघौ बांधा । परा फेरु भुईं भारु न कांधा ॥
हनिवंत होई सब लाग गुहारा । आवहिं चहुं दिसि केर पहारा ॥

611/2 तुम्ह सावंत नहिं सरबरि कोऊ । तुम्ह अंगद हनिवंत सम दोऊ ॥

... जस हनिवंत राघौ बंदि छोरी । तस तुम्ह छोरि मिलावहु जोरी ॥

614/4,7 अंगद कोपि पाँव जस राखा । टेकौं कटक छ्तीसौ लाखा ॥

... हनिवंत सरिस जंघ बर जोरौं । धँसौं समुन्द्र स्याम बंदि छोरौं ॥

635/3 मदति अयूब सीस चढ़ि कोपे । राम लखन जिन्ह नाऊँ अलोपे ॥

647/9 छाँड़ि लंक भभीखन जेहि भावै सो लेउ ।

651/2 तब लगि सो औसर होइ बीता । भए अलोप राम औ सीता ॥

पद्मावत में जायसी का मूल उद्देश्य मानुष प्रेम के औदात्य की कथा कहना है. रामकथा का वर्णन उनका मुख्य अभीष्ट नहीं है. इसलिए जायसी रामकथा का संकेत करते हुए उसकी सामर्थ्य का उपयोग अपनी मूलकथा को प्रभावी बनाने के लिए करते हैं. इस प्रक्रिया में रामकथा में अंतर्निहित मूल्यबोध और मूल कथा प्रसंगों को जायसी प्रतिष्ठित करते चलते हैं. यही नहीं जायसी महाभारत की कथा के विभिन्न संदर्भों से लेकर दुष्यंत-शकुंतला की कथा, राजा भोज की कथा, विक्रमादित्य की कथा, भर्तृहरि की कथा, गोरखनाथ और उनके गुरु मछन्दर नाथ की कथा समेत विभिन्न कथाओं का उल्लेख स्थान स्थान पर करते चलते हैं. जायसी के अनुभव और वर्णन के दायरे में ऋषि, सन्यासी, राम भक्त, मसवासी, ब्रह्मचारी, दिगंबर, सिद्ध, जोगी, वियोगी, महेश भक्त, यति, शक्ति के भक्त, श्वेतांबर साधु, वानप्रस्थी, सिद्ध, साधक, अवधूत- ये सभी शामिल हैं.[8]

लोक का संबंध स्मृतियों से होता है, जिसमें मिथक,प्रतीक, देवी-देवता, पूजा-अनुष्ठान, सामूहिकता, सब शामिल है. स्मृतियों का संबंध परंपरा से भी है. लोक की स्मृति में मनुष्य का विराट अनुभव संसार होता है जिसमें नदियां, ताल-तलैया, पहाड़, झरने, खेत-खलिहान, बाग-बगीचे, पशु-पक्षी,- इन सब की व्यापक और भरी पूरी दुनिया होती है, जो प्रकृति का अपूर्व भंडार है. राजा गंधर्व सेन की अनुमति के पश्चात रत्नसेन और पद्मावती के विवाह की तैयारियां शुरू होती हैं. इस अवसर पर जायसी जिस तरह मग्न होकर विभिन्न लोकाचारों और रीतिरिवाजों का वर्णन किया है वह अनुपम है. ऐसा लगता है कि कवि स्वयं प्रत्येक अवसर में सम्मिलित होकर उनके चलचित्र प्रस्तुत कर रहा है. लग्न देखकर विवाह निश्चित की तिथि तय होती है, विभिन्न लोगों को निमंत्रित किया जाता है, पचास करोड़ बाजे बजने लगते हैं, मणि-माणिक्य लगा हुआ मंडप बनाया जाता है, मंडप के नीचे चंदन के खंभों की पंक्तियाँ लगाई जाती हैं, मणियों के दीपक दिन-रात जलते हैं. समस्त राजमहल में आनंदोत्सव छाया हुआ है. घर-घर वंदनवारें बंधी हुई हैं, प्रत्येक मार्ग पर सजावट है. फिर गाजे-बाजे के साथ बारात का आगमन, पद्मावती का सखियों के साथ वर देखने जाना, बारात का स्वागत, पंक्ति में बैठकर विभिन्न प्रकार के व्यंजनों का आनंद लेना, दर्जनो पकवानों का सेवन, मंत्रोचार के साथ कन्यादान की विधि, भाँवर पड़ना, विदाई इत्यादि के विवरण जायसी ने दिए हैं. भारतीय समाज के वैवाहिक रीतियों एवं पद्धतियों से जुड़े इन समस्त दृश्यों को जायसी पूरे मनोयोग से बखूबी चित्रित करते हैं.[9]

भारतीय संस्कृति की परंपराओं, आस्थाओं, लोकविश्वासों को आधार बनाकर जायसी ने अपूर्व काव्य-कौशल का परिचय दिया है. भारतीय पारिवारिक जीवन में पर्व-त्योहारों के अतिरिक्त विभिन्न संस्कारों का भी विशेष महत्व रहा है. इन संस्कारों को भी जायसी ने बखूबी स्थान दिया है. जैसे पद्मावती के जन्म के पश्चात छ्ठी पूजन,

नामकरण संस्कार, ज्योतिषियों द्वारा जन्म-पत्री बनाया जाना इत्यादि लोकाचार जायसी ने दिखाया है. निश्चय ही जायसी ने हिंदू जन-जीवन को निकट से देखा-परखा था. इसीलिए उन्होंने हिंदू जीवन पद्धति, रीति-रिवाजों, परंपराओं, लोक मान्यताओं, व्रत-त्योहार आदि का भी विशद वर्णन किया है. जायसी के यहाँ लोक श्रुति के अनगिनत प्रसंग आते हैं. रामस्वरुप चतुर्वेदी के शब्दों में कहें तो 'रामचरितमानस' यद्यपि 'लोक-वेद' युग्म के महत्व को बार-बार रेखांकित करता है, पर लोक-दृष्टि का वास्तविक ब्यौरा जायसी के पद्मावत में मिलता है.10 पद्मावत में वर्णित भारतीय समाज एवं लोक संस्कृति, उसकी परम्पराएं, विश्वासों, क्रियाकलापों की प्रचुरता है. इनमें से कई परंपराओं को 'पद्मावत' में तलाशा जा सकता है, जो आज भी आदर्श मानी जाती हैं. जायसी ने गुरु, अतिथि, माता-पिता के संदर्भ में भारतीय उच्च आदर्शों को दिखाया है. डॉ. रामचंद्र तिवारी मानते हैं- 'प्रेमिका की प्राप्ति के लिए नायक के अथक उद्योग का चित्रण करके उसने भारतीय समाज-मर्यादा का आदर्श उपस्थित किया है. पार्वती और महादेव को परीक्षक और सहायक कल्पित करके कवि ने भारतीय जन-जीवन के आदिम विश्वास को मूर्त किया है.'11

लोकजीवन की सामग्री को जायसी ने जिस तरह एक प्रबंधात्मक काव्य में स्थान दिया है वह अनुपम है. प्रेमी के अभियान में शिव-पार्वती का सहायक होना, जोगियों और अन्य साधकों की शैली का उपयोग, प्रकृति की विराट रूप के साथ ही दुर्ग, राजभवनों के ऐश्वर्य का चित्रण वहाँ की साज सज्जा, सुगंध और वातावरण का जो चित्र जायसी खींचते हैं, वह उनके लोक संस्कृति के साथ ही शिष्ट और आभिजात्य के साथ लोक के समन्वय का रूपक भी बन जाता है. जीवन के कठिन परिस्थितियों के चित्रण में यह आभिजात्य भी लोक की शरण में पड़ा दिखाई पड़ता है. रत्नसेन के योगी बनकर घर से निकलने का संदर्भ हो, सिंहलदीप में रत्नसेन की माता एवं नागमती का संदेश हो या पद्मावती-नागमती संघर्ष - अनेकश: लोकजीवन के अनुभवों इन स्थितियों को प्रामाणिकता और धार के साथ अभिव्यक्त कर पाते हैं. जायसी का कवि अनुभवों की चरमसीमा को स्पर्श करने में सर्वथा कुशल है. जायसी के यहाँ अगर जीवन के अपूर्व आनंद के चित्र हैं तो दुख और पीड़ा का अनंत भी. उनके यहाँ अगर संयोग का ऐश्वर्य है तो वियोग की दारुण दशा का अपूर्व चित्र भी. पहले का उदाहरण पद्मावती का षडऋतु वर्णन है तो दूसरे का नागमती का बरहमासा वर्णन. शुक्ल जी के शब्दों में नागमति का विरह वर्णन तो हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है.12 जायसी इस स्तर पर विरह वर्णन की भारतीय परंपरा का अनुगमन करते दिखाई पड़ते हैं. वाल्मीकि, कालीदास से लेकर जायसी, सूर, तुलसी आदि कवियों तक में यह परंपरा स्पष्ट दिखाई देती है. वाल्मीकि के राम कदंब से पूछते हैं कि क्या तुमने पीतवस्त्र-धारिणी सीता को देखा है? हे मृग, क्या तुम उस मृगनयनी को जानते हो?13 जायसी कृत नागमती के विरह वर्णन में नागमती का व्यक्तिगत कष्ट ही नहीं, एक सामान्य नारी की पीड़ा, साधारण जन के पारिवारिक जीवन की व्यथा के साथ एकमेव हो जाती है, जिससे आम पाठक बड़ी आसानी से उससे तादात्म्य स्थापित कर लेता है.

पुख नछत्र सिर ऊपर आवा । हौं बिनु नांह मंदिर को छावा ॥
रहौं अकेलि गहें एक पाटी । नैन पसारि भरौं हिय फाटी ॥

जायसी की सबसे खास बात है दांपत्य जीवन के प्रेम की प्रतिष्ठा के साथ ही भारतीय संयुक्त परिवार को महत्व देना. रत्नसेन के सिंहलदीप चले जाने पर

नागमती तो रत्नसेन को संदेश भेजती ही है, उसके साथ ही जायसी रत्नसेन की माँ का चित्रण करना भी नहीं भूलते, यह अपने आप में अनोखी बात है. आगे चलकर इस प्रक्रिया में जायसी अप्रिय प्रसंगों को भी छोडते नहीं अपितु उनका सामना लोक अनुभवों के आधार पर ही करते हैं. रत्नसेन के सिंहलगढ़ के प्रस्थान से पूर्व का दृश्य एवं नागमती और पद्मावती का आपसी संघर्ष इसके उदाहरण हैं.

जायसी को एक भक्त कहा जाय, सूफी फकीर कहा जाय, अथवा प्रेम की पीर का गायक एक कवि- जिस किसी रूप में भी उन्हें देखा या समझा जाय, मुख्य तौर पर वे गंवई मन और संस्कारों वाले एक साधारण और सरल किस्म के सहृदय मनुष्य के रूप में सामने आते हैं. एक ऐसा साधारण मनुष्य जो विभिन्न प्रकार के सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, वैचारिक भेदों-मतभेदों से परे सर्वसाधारण मानव से प्रेम करने वाला हो, जिसे सामाजिक सांस्कृतिक मूल्यों और मानवता की फिक्र हो.[14] जायसी को साधारण मनुष्य के असाधारण व्यक्तित्व, कर्मठता और इंसानियत की सच्ची परख थी. उन्होने इस साधारण जन के जीवन के विविध रंगों नजदीक से देखा परखा था, यही वजह है कि इनके पूरे काव्य में साधारण जन की क्रिया-प्रतिक्रिया, उसके चिंतन, अभिव्यक्ति और आकांक्षाओं को प्रमुख जगह मिली है. यहाँ तक कि पद्मावत के ढेरों प्रसंगों में, उसके विविध चरित्रों में भले ही शहंशाह, राजा, रानी, अथवा सामंत सरदार क्यों न हों, उनके अपने हर्ष, उल्लास, ताप और त्रास में जायसी ने उन्हें जिस तरह देखा और दिखाया है, वे ज़्यादातर साधारण जन के रूप में ही सामने आते हैं. इससे भले उन चरित्रों की वास्तविक छवि को ठेस पहुँचती हो परंतु जनसमान्य के अनुभवों की प्रामाणिकता के धरातल पर जायसी उनसे गहरे जुड़ जाते हैं. उनके अनुभवों और प्रतिक्रियाओं में समानता के इस संतुलन में जायसी आमजन के जीवन की कठिनाइयों और संघर्ष की मनोवृति का सजीव अंकन करते हैं. ऐसा ही एक चित्र उभरता है है जब रत्नसेन की माँ सिंहलद्वीप में आनंदपूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे अपने पुत्र रत्नसेन को संदेश भेजते हुए कहती हैं. इस पूरे चित्रण में किसी राजमाता के संदेश की बजाय अपने पुत्र के बिना असहाय एक साधनहीन माँ की व्यथा सजीव हो उठती है. जायसी लिखते हैं-

रतनसेनि के माइ सुरसती ।गोपीचंद जसि मैनावति ॥
आंधरि बूढ़ि सुतहि दुख रोवा । जोबन रतन कहाँ भुइं टोवा ॥
जोबन अहा लीन्ह सो काढ़ी । भै बिनु टेक करै को ठाढ़ी ॥
बिनु जोबन भौ आस पराई । कहाँ सपूत खांभ होई आई ॥
नैनन्ह दिस्टि तन दिया बराहीं । घर अँधियार पूत जो नाही ॥ (362)

यही नहीं अपने साधना के दौरान रत्नसेन हो या विरह व्यथा में डूबी पद्मावती का चित्र हो, वहाँ भी अनेक ऐसे अनुभवों को जायसी ने उनके साथ जोड़ा है. नागमती वियोग वर्णन तो लोकजीवन का अपूर्व खजाना है ही. नागमती एक विरह वर्णन का एक दृश्य-

ररि दूबरि भई टेक बिहूनी । थंभ नाहिं उठि सकै न थूनी ॥
बरसहिं नैन चुअहिं घर माहाँ । तुम्ह बिनु कंत न छाजन छाहाँ ॥ **(356)**

जायसी राजमहलों के ऐश्वर्य और विलास के जीवन का चित्रण करते हुए भी लोकजीवन की आधारभूमि को नहीं छोडते, बल्कि वे इसे और अधिक समृद्ध करते चलते हैं. यह जायसी के लोक समन्वय की उपलब्धि कही जा सकती है. हजारी

प्रसाद द्विवेदी ने जब यह कहा था कि 'खड़ा पैर परंपरा है और उठता पैर आधुनिकता'[15] तो वे प्रकारांतर से लोक की महत्ता को सबलीकृत कर रहे थे और लोक और शास्त्र के आपसी संबंधों की रूपरेखा को स्पष्ट कर रहे थे. यह संबंध अतीत को वर्तमान से जोड़ता है और भविष्य की सपने बुनने का कार्य भी करता है. मानव के बिखराव को रोकता भी है.

भक्तिकालीन कवि जिस मानव एकता, समता और प्रेम की बात करते हैं, जिस सामूहिकता की बात करते हैं, वह लोक की अनुभूतियों और स्मृतियों के दम पर हासिल समझ का ही तो परिणाम है. आधुनिकता और उत्तरआधुनिकता के नाम पर आज जिस तरह मानव स्मृतियों के साथ छल हो रहा है, जिस तरह लोक अनुभवों के मिथकों, पौराणिक आख्यानों और परम्पराओं से काटा जा रहा है, स्वतन्त्रता और वैयक्तिकता के नाम पर मनुष्य को उपभोक्ता या कुछ नहीं के विकल्पों में समेटा जा रहा है, ऐसे समय में लोक अनुभवों के साहित्य की महत्ता बढ़ जाती है. लोक अनुभवों और मान्यताओं पर आधारित लोकमत सभी समाजों में एक सा नहीं होता. वह अनुभवाश्रित, यथार्थपरक, और समयसापेक्ष होता है, साथ ही किसी भी समाज में एक ही समय में विभिन्न अनुभवों से जुड़े अनेक लोकमत भी हो सकते हैं. ऐसे में यह भी स्पष्ट है कि उसमें ज़िंदगी की सच्चाई होती हैं लेकिन उसे सच्चाई का एकमात्र या अंतिम साक्ष्य समझना ठीक नहीं. बड़ा रचनाकार इस लोकमत के संतुलन का वाहक होता है.

जायसी का युग भारतीय समाज और संस्कृति की दृष्टि से विशृंखलता और विघटन का काल था, साथ ही इस्लाम के संघीय तौर पर दृढ़ होने का दौर भी था. यहां धर्म के मूल्यों, मर्यादाओं और नियमों की अतिरंजना एवं विकृतियां अधिक प्रत्यक्ष एवं प्रभावी होती जा रही थी.[16] परंतु जायसी का विराट कवि व्यक्तित्व इन दबाओं से प्रभावित नहीं होता और मानवीय संवेदनाएं उनकी प्राथमिकताओं में सबसे ऊपर रहती हैं. सांप्रदायिक टकराहट के दौर में जायसी का रचना-कर्म दो धर्मों और समुदायों के बीच संतुलन का स्तुत्य प्रयास है. जायसी इसके लिए स्वयं को हमेशा सांप्रदायिक विद्वेष से दूर रखते हैं. सांप्रदायिक सौहार्द्र के साथ ही कथा के स्वाभाविकता के बीच बराबर संतुलन बना रहता है. जायसी की व्यापक मानवीय दृष्टि इस संतुलन का आद्यंत निर्वाह करती है. अलाउद्दीन और रत्नसेन के बीच युद्ध के दौरान यह तय करना कठिन हो जाता है कि दोनों पक्षों में किसकी वीरता की तारीफ की जाए. जायसी की अभिव्यक्ति यहाँ देखने लायक है. वे दोनों पक्षों के उत्साह और वीरता से अभिभूत हैं, इस स्थिति में युद्ध के कठिन समय के बीच प्रकृति के बदलते स्वरूप को बीच में लाकर वे बहुत कम में बहुत कुछ कह जाते हैं. मानव जीवन के कोलाहल और घनघोर युद्ध में भी अंबराई कवि को विस्मृत नहीं होती, अपितु वह मानव जीवन के इन संघर्षों की साक्षी बन जाती है-

आठ बरस गढ़ छेंका अहा । धनि सुल्तान कि राजा महा ॥
आई साहि अंबराऊं जो लाए । फरे झरे पै गढ़ नहिं पाए ॥

लोकजीवन अधिकांशत: बदहाली, दीनता और अभावों से भरा हुआ होता है. वास्तविक जीवन संघर्षपूर्ण होने के बावजूद सपनों भरी दुनिया की कहानियाँ उसका हिस्सा हुआ करती हैं. रूपकों के दबाव को छोड़ दिया जाय और जायसी को विशुद्ध रूप से एक कवि मान लिया जाय तो उनके पद्मावत का पूर्वार्द्ध अपने बहुलांश में मिथकीय कल्पना और सपनों भरी दुनिया का चित्रण है. जायसी ने इसमें

अपनी कल्पना का स्वछंद उपयोग किया है. इस दृष्टि से यह खंड अपार प्राकृतिक सौंदर्य और समृद्धि का खजाना मौजूद है. विविध रंगों और तरंगों से युक्त विशाल जलराशि, शक्ति और रत्नों को समेटे समुद्र की दुनिया से लेकर विराट पर्वत और घाटियां, स्वाद सुगंध और औषधियुक्त फल, फूल, और वनस्पतियों से समृद्ध वन और वाटिकाएं, रहस्यमय कंदराएँ, सुंदर सरोवर और जलक्रीणा करती अफ्सराएं, ऊंचे विशाल दुर्ग और कीमती हीरे जवाहरातों से भरी दुनिया सामने उभरती है जो अत्यंत मनोहारी और चित्ताकर्षक है.

मध्यकाल में नागर सभ्यता जहां उच्च वर्ग की प्रतिनिधिक और केन्द्रित थी वहीं आमजन की सभ्यता ग्राम एवं कृषि केंद्रित थी. आमजन का जीवन विषमताओं, कठिनाइयों और शोषण से भरा था. एक ओर बाढ़, अकाल, महामारी जनित आपदाएँ थीं तो दूसरी ओर अशिक्षा और अज्ञान में डूबा मेहनतकश वर्ग कर्मकांड, अंधविश्वास और भाग्यवाद के सहारे जीवन जी रहा था. मौजूदा जीवन के सारे कष्ट पूर्व कर्मों का फल मानने से उनमें परिवर्तन के संघर्ष और जज्बे को कोई जगह न थी, समाज और सत्ता के चालकों को ईश्वरीय संरक्षण के विचार ने जीवन को और अधिक विडम्बनापूर्ण बना दिया था. सारे भक्त कवि इसी भाग्यवादिता और संरक्षण के विरुद्ध उठ खड़े होने का आह्वान करते हैं और मनुष्य मात्र से प्रेम, उसकी एकता, उसकी स्वतन्त्रता को परिभाषित करने का प्रयास करते हैं, जिससे आमजन के जीवन की विषमता और दीनता को कम किया जा सके. सबसे बड़ी शक्ति के केंद्र में ईश्वर को मानने की बावजूद सभी मनुष्यों की एकता, उनके मानवीय मूल्यों और कर्मों को चालक शक्ति मानने से एक मूलभूत अंतर उपस्थित होता है जो कि भक्त कवियों का काम्य भी है. सूफियों ने इसके लिए प्रेम तत्व को केंद्रीय महत्व का माना.

सूफियों ने लोक प्रचलित प्रेम गाथाओं को काव्य रचना का आधार बनाया और अपने क्षेत्र की बोली में कविता लिखी इस दृष्टि से जन संस्कृति के विकास में सूफियों का योगदान अविस्मरणीय है.17 इस दृष्टि से जायसी नि:संदेह लोक जीवन के कुशल चितेरे कवि हैं. लोक के भावों और विश्वासों के अंकन के साथ जायसी सच और मर्यादा के साथ खड़े होने वाले कवि हैं. वे संस्कृतियों के संघर्ष के दौर में एक मूल्यवान समवेशी संस्कृति की प्रस्तावना करते हैं जिसके मूल में प्रेम है. यह प्रेम ही असली बैकुंठ है. 'मानुस प्रेम भयउ बैकुंठी' का आशय तभी सिद्ध होता है जब प्रेम मनुष्यता के साथ किया जाए, संवेदनाओं और हृदय से किया जाय. ज़ोर जबर्दस्ती से नहीं. रतनसेन उनका आदर्श नायक है. रतनसेन और अलाउद्दीन दोनों पहले-पहल सुनकर ही पद्मावती के प्रति आकर्षित होते हैं. रतनसेन तोते से उसकी सुंदरता को सुनकर जोगी बनकर साधना आदि से पाने की कोशिश करता है. अलाउद्दीन राघवचेतन के मुंह से उसकी सुंदरता को सुनकर चित्तौड़ पर चढ़ाई करके उसे पाने की कोशिश करता है. एक प्रेमी का रूप लेता है दूसरा रूप के लोभी और अहंकारी का. एक अपने प्रेम के दौरान तमाम व्यक्तिगत दुख उठाता है, सता और ताकत को छोडकर उसे पाने के लिए संघर्ष करता है. दूसरी तरफ ताकत व सत्ता के प्रतीक के रूप में अलाउद्दीन है, दिल्ली के सुल्तान से बेहतर सत्ता और ताकत का प्रतीक कौन भला और कौन होता? लोक की संवेदना यहाँ स्पष्ट है. इस चिंतन में हिंदू-मुसलमान की मजहबी दीवारें नहीं हैं, अवध की साझी चिंतन परंपरा है. अलाउद्दीन चित्तौड़ को तो जीत लेता है लेकिन उसे पद्मावती नहीं मिलती. दरअसल अलाउद्दीन पद्मावती को प्राप्त

करने के लिए चित्तौड़ पर चढ़ाई करता है लेकिन उसके पास प्रेम नहीं. उसके पास प्रेम के सिवा सब कुछ है जैसे सत्ता शक्ति और धार्मिक उन्माद. अपनी ताकत, उन्माद और अहंकार के वशीभूत होकर अलाउद्दीन और इस्लाम का चित्तौड़ पर भले ही कब्जा हो जाता है, लेकिन उसकी कीमत क्या है? उसे हासिल क्या होता है? जवाब है कि इस उन्माद में वहां जो कुछ भी सुंदर था, कोमल था, काम्य था, वह सब नष्ट हो जाता है. यही नहीं स्वयं अलाउद्दीन के शब्दों में 'होई गा राति देवस जो बारा'. अर्थात रात दिन जिसे रोकने की कोशिश की वही हो गया. अलाउद्दीन के इस अफसोस में ही जायसी का मूल मंतव्य निहित है. यह इस जीत से बड़ी हार क्या हो सकती है? संदेश स्पष्ट है कि धार्मिक कट्टरता भयंकर होती है, यदि वह सत्ता से जुड़ी हो तो और भी विनाशकारी होती है,18 उन्माद से भरी होती है. जायसी की दृष्टि में अलाउद्दीन जीत कर भी हार जाता है, दिल्ली का बादशाह अपनी सारी ताकत, वैभव और विजय के पश्चात भी अपनी इच्छित को पूरा नहीं कर पाता. उसकी इच्छा बस मृगतृष्णा बन कर रह जाती है. उसे पद्मावती नहीं मिलती, मिलती है तो बस उसकी राख़. जिस राख़ को उठाकर उसे अपने अहंकार और बादशाहत की व्यर्थता का बोध होता है, यह अहसास होता है कि यह पृथ्वी झूठी है, अर्थात तृष्णा का कोई अंत नहीं. जायसी का मूल मंतव्य ध्वनित होने लगता है कि मानुष प्रेम ही बैकुंठ है सबसे बड़ा और अंतिम सत्य है.

जायसी की यह स्थापना महत्वपूर्ण है कि इतिहास का युगीन यथार्थ जिसमें बड़ी-बड़ी शक्तियाँ, साम्राज्य, उनके वैभव, वलासिता, अकूत दौलत, और वासनाओं की आसक्ति - यह सब चाहे जितना चित्ताकर्षक और प्रभावी लगे, सबकुछ क्षणभंगुर है, सब मिटने को अभिशप्त है. मानव प्रेम ही असली बैकुंठ है, कीर्ति ही स्थायी है. यह पूरे भक्तिकाव्य की केंद्रीय प्रस्तावना है जिसे सभी भक्त कवि पूरी ताकत के साथ सामने लाते हैं. एक लाख पूत सवा लख नाती, तेहि रावन घर दिया न बाती, कहकर कबीर भी इसी क्षणभंगुरता का यथार्थ अन्यायी और निर्दयी ताकतों के सामने रखते हैं और उसके कर्मों के लेखा-जोखा रखने की वकालत करते हैं. सेवा, त्याग, सम्मान, प्रेम जैसे मूल्यों की प्रस्थापना करते हैं. भक्तिकालीन कवियों के संदर्भ में यह बात खासा ध्यान देने की है कि उन्होंने अपने समकालीन सामंती संस्कारों से संघर्ष किया और यथासंभव जनसामान्य की समता और बराबरी के मूल्यों को स्थापित करने के संघर्ष पर बल दिया. जायसी भक्तिकाल के एकमात्र कवि हैं जिनके सामने हिंदू मुसलमान अलग-अलग नहीं है. वह मिलकर सामान्य पाठक या श्रोता हो गए हैं, इसलिए जायसी को न चौकन्नी तटस्थता की जरूरत पड़ती है ना आलोचना और प्रतिरोध के तराजू के दोनों पक्षों को बराबर रखने की चिंता व्याप्ति है.19 जायसी का प्रस्थान-बिंदु न ईश्वर है, न कोई अध्यात्म है. उनकी चिंता का मुख्य ध्येय मनुष्य है.20 अपनी सारी कमजोरियों, तृष्णा और खूबियों के साथ. मानव जीवन में अच्छा-बुरा जो कुछ भी है, उसे अपनी संपूर्ण विविधता के साथ संपूर्ण परिदृश्य का अंग हो गया है. इस संपूर्ण परिदृश्य को आत्मसात कर लेने के बाद ही वह गहरा विवेक जन्म लेता है जो मनुष्य की पीड़ा को देख और पहचान सकता है. जायसी एक सजग और स्वाभिमानी रचनाकार हैं, जिनकी दृष्टि में मानवीय अनुभव और मानवीय मूल्यों की व्यंजना सर्वोपरि है. वे विभिन्न साधना पथों और मान्यताओं को ग्रहण करते हैं. विभिन्न सिद्धांतों, मत वादों और मार्गों को नोटिस करते हैं. तथापि जिस तटस्थ

मानवीय संवेदना, गहराई, मार्मिकता और संवेदनशीलता के साथ वे सर्जक की भूमिका निभाते हैं उसमें सभी प्रकार के भूमिकाओं का विरोध का समाहार हो जाता है. समस्त धार्मिक परंपराओं साधना मार्गों सामाजिक मान्यताओं और उनकी सारी शब्दावली अपने रूठ संदर्भों से मुक्त होकर जीवन की विविधता और विस्तार के साथ जैसी की मूल्य प्रक्रियाओं की तृप्ति का हिस्सा बन जाती है. अंतत: जायसी यह संदेश देते हैं यह लोभ-लालच, भोग, ऐश्वर्य और मानव तृष्णा व्यर्थ है, नाशवान है और अगर कुछ स्थायी है तो वह यश है, मानवीय प्रेम है और वही असली बैकुंठ भी है.

संदर्भ

1. पृष्ठ 84, मध्यकालीन साहित्य: पुनरावलोकन, नित्यानंद तिवारी, साहित्य भंडार, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 2015
2. मीरा का काव्य, विश्वनाथ त्रिपाठी, पृष्ठ 65, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, संस्करण 2010
3. पृष्ठ 106, जायसी, विजयदेव नारायण साही, हिंदुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, 1993
4. पृष्ठ 63, हिन्दी साहित्य की भूमिका, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 1991
5. पृष्ठ 56, हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, उन्तीसवाँ संस्करण, सं. 2051
6. शुक्ल जी लिखते हैं - "सौ वर्ष पहले कबीरदास हिन्दू और मुसलमान दोनों के कट्टरपन को फटकार चुके थे. पंडित और मुल्लाओं की तो नहीं कह सकते परंतु साधारण जनता 'राम और रहीम' की एकता को मान चुकी थी. साधुओं और फकीरों को दोनों दीन के लोग आदर और सम्मान की दृष्टि से देखते थे. साधू और फकीर भी सर्वप्रिय वही हो सकते थे जो भेदभाव से परे दिखाई पड़ते थे. बहुत दिनों तक एक साथ रहते हिन्दू और मुसलमान एक दूसरे के सामने अपना हृदय खोलने लगे थे, जिससे मनुष्यता के सामान्य भावों के प्रवाह में मग्न होने और मग्न करने का समय आ गया था. जनता की प्रवृति भी भेद से अभेद की ओर हो चली थी. मुसलमान हिंदुओं की राम कहानी सुनने को तैयार हो गए थे और हिन्दू मुसलमानों का दास्तान हमजा." पृष्ठ 13, त्रिवेणी, रामचन्द्र शुक्ल, संपादक-कृष्णानंद, नगरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी, पैंतालीसवाँ संस्करण, सं. 2050
7. https://scroll.in/article/828538/the-epic-poem-padmavat-is-fiction-to-claim-it-as-history-would-be-the-real-tampering-of-history
8. पृष्ठ-34, सिंहल द्वीप-वर्णन खंड (30), पद्मावत, संपादक - वासुदेवशरण अग्रवाल, साहित्य सदन, चिरगांव, दूसरा संस्करण, सं. 2018
9. पृष्ठ-312-328, रत्नसेन-पद्मावती विवाह खंड (275-286), पद्मावत, संपादक - वासुदेवशरण अग्रवाल, साहित्य सदन, चिरगांव, दूसरा संस्करण, सं. 2018
10. पृष्ठ-52, भक्ति काव्यधारा, रामस्वरुप चतुर्वेदी, लोकभारती, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2003
11. पृ-96, मध्ययुगीन काव्य-साधना, डॉ. रामचंद्र तिवारी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, गोरखपुर: वाराणसी, प्रथम संस्करण-सितंबर 1962
12. पृष्ठ-22, त्रिवेणी, रामचन्द्र शुक्ल, संपादक-कृष्णानंद, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, पैंतालीसवां संस्करण, संवत 2050
13. पृष्ठ-23, त्रिवेणी, रामचन्द्र शुक्ल, संपादक-कृष्णानंद, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, पैंतालीसवां संस्करण, संवत 2050

14. पृष्ठ-129, भक्ति-आंदोलन और भक्ति-काव्य, शिव कुमार मिश्र, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वितीय संस्कारण, 2012
15. पृष्ठ-46, उद्धृत, लोक और शास्त्र:अन्वय और समन्वय, प्रधान संपादक-दयानिधि मिश्र, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2015
16. पृष्ठ 55, जायसी एक नई दृष्टि, रघुवंश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, विद्यार्थी संस्करण, 1993
17. पृष्ठ-38, भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य, मैनेजर पांडेय, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली चतुर्थ संस्करण 2003
18. पृष्ठ 39, भक्ति आंदोलन और सूरदास का काव्य, मैनेजर पांडेय, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली चतुर्थ संस्करण 2003
19. पृष्ठ-64, जायसी, विजयदेव नारायण साही हिंदुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण 1993
20. पृष्ठ-62, जायसी, विजयदेव नारायण साही हिंदुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण 1993

Aayushi International Interdisciplinary Research Journal
ISSN 2349-638X
www aiirjournal.com